दीन को कैसा होना चाहिए?

हुज्जतुल इस्लाम वलमुस्लिमीन मौलाना सै० हसन नक़वी साहब क़िब्ला

इन्सान अपनी ज़िन्दगी के हर मामूली से मामूली हिस्से में भी इसकी फ़िक्र रखता है कि जिस मक़सद के लिए वह क़दम उठा रहा है, उसमें कामयाब रहे लेकिन कामयाबी उसी वक़्त हो सकती है जब मक़सद तक पहुँचने का रास्ता सही हो अगर रास्ते में कुछ ज़रा भी ख़राबी होगी तो मक़सद हासिल करना नामुमकिन हो जायेगा इसी लिए हर अक़्लमन्द अपनी पूरी कोशिश करके वही रास्ता चुनता है जो सबसे ज़्यादा मक़सद से क़रीब हो, जिसमें मक़सद तक पहुँचना यक़ीनी हो। कुछ लोग अपने मक़सद को हासिल करने के लिए बहुत कोशिश करते हैं लेकिन नाकाम रहते हैं, आख़िर क्यों? सिर्फ़ वजह ये होती है कि मक़सद तक पहुँचने का रास्ता ग़लत था, यही वजह है कि जो क़ानून रोज़ बनते हैं और बिगड़ते हैं मौजूदा ज़माने की सियासत पर नज़र करके इसका अच्छी तरह अन्दाज़ा किया जा सकता है कि आज एक क़ानून पास हुआ कल वही क़ानून बदल दिया गया, आज एक क़ानून का किसी एक शख़्स को ज़िम्मेदार बनाया गया और कल वही शख़्स नाअहल साबित हुआ ऐसा क्यों होता है? बात ये है कि कल तक जिस क़ानून को मक़सद हासिल करने के लिए भी हम फ़ायदेमन्द और मुकम्मल समझ रहे थे आज वही नुक़सान पहुँचाने वाला और अधूरा साबित हुआ फिर इसकी भी कोई ज़िम्मेदारी नहीं ली जा सकती कि इस वक़्त जिस क़ानून को हम सही समझ रहे हैं वह फ़ायदे वाला ही रहेगा, मुमकिन है कि आगे ये भी ग़लत मालूम हो इसलिए जब भी इन्सान को अपने चुनाव की ग़लती का एहसास होता है वह फ़ौरन रास्ता बदल देता है किसी भी मुल्क में जितने भी क़ानून बनते हैं हक़ीक़त में वह एक रास्ते की हैसियत रखते हैं मक़सद असल में कभी भी क़ानून नहीं कहलाता, बल्कि उन पर नतीजे निकलते हैं जिस तरह किसी मन्ज़िल तक पहुँचने के लिए रास्ते पर चलना ज़रूरी होता है उसी तरह किसी ख़ास मक़सद तक पहुँचने के लिए किसी ख़ास क़ानून पर अमल करना होता है जैसे क़त्ल की सज़ा क़त्ल है, चोरी की सज़ा मिसाल के तौर पर दस साल क़ैद, ज़िना की सज़ा कुछ साल की क़ैद वग़ैरा ये क़ानून असल मक़सद नहीं होते, बल्कि इन क़ानूनों पर अमल करने के बाद जो मुल्क में अम्न, किरदार में अच्छाई, ज़िन्दगी में बराबरी पैदा होती है ये असली मक़सद होता है इसलिए इस मक़सद को हासिल करने के लिए जो सबसे ठीक रास्ता होता है वह इख़्तियार किया जाता है और अगर रास्ते के चुनने में ग़लती का एहसास हो गया तो फ़ौरन रास्ता बदल दिया जाता है।

ये भी यक़ीनी बात है कि जब मक़सद ऊँचा होता है उसकी अहमियत को देखते हुए ही उसकी शुरुआत की जाती है, अगर कोई बहुत ख़ास मक़सद है तो शुरुआत में भी वैसा ही ख़ास इन्तिज़ाम होगा और अगर मक़सद छोटा है तो शुरुआत भी मामूली होगी और मक़सद की अहमियत के हिसाब से शुरुआत में एहतियात रखी जायेगी। अगर हमारा असली मक़सद पूरे मुल्क का फ़ायदा है तो उसी हिसाब से उसके हासिल करने के

रास्ते, यानी शुरुआत भी अहम और बड़ी होगी, इसका ख़ास ख़याल रखा जायेगा कि कहीं शुरुआत में ही कोई ग़लती न हो जाये, क्योंकि अगर शुरुआत ग़लत हो तो मक़सद का हसिल करना नामुमकिन होगा और जब मक़सद हासिल न होगा तो ये एक की ग़लती पूरे मुल्क की तबाही बन जायेगी। अगर किसी ख़ास ज़माने से कोई मक़सद जुड़ा है तो उस के लिए शुरुआत भी वैसी ही महदूद और उस ज़माने तक के लिए होगी अगर किसी शहर को कोई मक़सद जुड़ा है तो उसकी वैसी शुरुआत की जायेगी अगर पूरी क़ौम पर किसी मक़सद का हासिल करना टिका हुआ है तो उसके लिए उसी हिसाब से शुरुआत होगी, अगर पूरी दुनिया से कोई मक़सद जुड़ा हो तो वैसी ही शुरुआत होगी। जैसे-जैसे मक़सद होंगे उसी तरह शुरुआत होगी और जैसे बड़े मक़सद होंगे उसी हिसाब से शुरु करने में एहतियात की जायेगी अगर शुरु में ग़लती से बस किसी एक के मक़सद को नुक़सान पहुँचा है तो किस हद तक एहतियात की जायेगी और अगर जमाअत के फ़ायदे को नुक़सान पहुँचा है तो उससे ज़्यादा एहतियात की जायेगी और अगर पूरे शहर के फ़ायदे को ठेस लगती है तो उसमें उससे ज़्यादा एहतियात चाहिए और अगर पूरी क़ौम को चोट लगती है तो और ज़्यादा एहतियात की ज़रूरत है और अगर पूरी इन्सानियत को नुक़सान होता है तो सबसे ज़्यादा एहतियात की ज़रूरत होती है मालूम हुआ कि मक़सद के एतेबार से ही शुरुआत की जायेगी और शुरु में एहतियात रखी जायेगी। ये भी हक़ीक़त अपनी जगह सही है कि जितना बड़ा मक़सद होगा उतनी ही शुरु करने में ग़लतियाँ होंगी इसलिए अगर मक़सद महदूद रहे तो शुरुआत भी महदूद होगी इसलिए ग़लती का इमकान कम होगा और अगर मक़सद बहुत बड़ा है तो शुरुआत भी बड़ी ही होगी जिसके बाद ग़लती का इमकान भी ज़्यादा होगा।

अब ज़रा ग़ौर कीजिये कि वह इन्सान जो लोगों के लिए कोई क़ानून बनाते हैं और उसमें ग़लतियाँ करते हैं, जमाअत के लिए उसूल तैयार करते हैं और ग़लतियाँ करते हैं, शहरों के लिए रास्ते तैय करते हैं और धोके खाते हैं, सूबों के लिए क़ानून बनाते हैं और ठोकरें खाते हैं मुल्कों के लिए उसूल बनाते हैं और नाकाम होते हैं यानी महदूद मक़सदों के लिए महदूद जगह बनाते हैं और फिर ग़लतियाँ करते हैं तो भला वह उन ग़ैर महदूद मक़सदों के लिए जो पूरी इन्सानियत के लिए हैं और उस वक़्त से जब से इन्सानियत का वजूद हुआ है और उस वक़्त तक जब तक कि ये लफ़्ज़ ज़िन्दा रहेगा क़ानून बनायें और ग़लती न करें? नामुमकिन है। अब तक देखने में आया है कि ये ग़लती करेंगे और ज़रूर करेंगे और फिर इनकी एक छोटी सी ग़लती भी पूरी इन्सानियत के लिए तबाही की वजह बन जायेगी ग़लती किसी एक या कई लोगों की होगी लेकिन पूरी इन्सानियत पर इस ग़लती का असर पड़ेगा।

इसलिए वह इन्सान जो अपनी ज़िन्दगी के छोटे से छोटे हिस्से में भी ग़लती बर्दाश्त नहीं कर सकता उसकी पूरी ज़िन्दगी ग़लतियों के किसी गहरे और ख़तरनाक गढढे में गिरा दी जाये ये फ़ितरत की खुली हुई मुख़ालेफ़त होगी तो फिर जो कोई ऐसा क़ानून बनाये जिससे ग़लती न हो सकती हो वह इन्सान नहीं हो सकता क्योंकि दुनिया ने इन्सान को क़दम-क़दम पर ठोकरें खाते बल्कि गिरते हुए देखा है इसलिए क़ानून वही बनाये जो फ़ितरत का पैदा करने वाला हो वह जब क़ानून बनायेगा तो उसमें ग़लती बिल्कुल नहीं होगी उसका बनाया हुआ क़ानून पूरी इन्सानियत के लिए होगा इसीलिए हम कहते हैं कि वह क़ानून जो माद्दी ज़िन्दगी, रूहानी ज़िन्दगी, सियासी ज़िन्दगी, तमद्दुनी ज़िन्दगी, बल्कि पूरी इन्सानियत की ज़िन्दगी के हर-हर हिस्से के लिए बनाया गया हो वह सिवाए ख़ुदा के कोई नहीं बना सकता उसी का बनाया हुआ क़ानून ग़लती से पाक होगा और मक़सद हासिल करने के लिए पूरी तरह काफ़ी होगा।

इस बयान के बाद ये शक पैदा हो सकता है कि

फिर ऐसे क़ानून पर अमल करने वाले को यक़ीनी मक़सद की मन्ज़िल तक पहुँचना चाहिए, क्योंकि वह क़ानून जो एक रास्ते की तरह है, सही है, उसमें कोई ग़लती नहीं और उस रास्ते का मन्ज़िल तक पहुँचना भी यक़ीनी है फिर जो भी इस रास्ते पर चलेगा वह यक़ीनी मक़सद को पहुँचेगा। फिर क्यों अब हर शख़्स मन्ज़िल तक नहीं पहुँचता हक़ीक़त में ऐसा हर शख़्स मन्ज़िल तक इसलिए नहीं पहुँचता कि वह रास्ते में ग़लती करता है, ये ग़लती चलने वाले की है न कि रास्ते के चुनने में ग़लती है और न ऐसा है कि ये रास्ता मन्ज़िल तक न पहुँचता हो। बल्कि इस रास्ते पर चलने वाले ने कहीं पर ग़लती की, वरना मुमकिन नहीं जो मक़सद की मन्ज़िल तक न पहुँचे इसकी मिसाल बिल्कुल ऐसी ही है जैसे कि हम किसी मन्ज़िल तक जाने के लिए किसी से रास्ता पूछें और कोई हमको रास्ता बता दे बताने वाले ने सही रास्ता चुनकर बताया और वह रास्ता हमारी मन्ज़िल तक भी पहुँचता है लेकिन फिर भी कभी हम मन्ज़िल तक इसलिए नहीं पहुँचते कि हमने अपनी ज़ाती ग़लती से रास्ते को बदल दिया या हम खुद भूलकर किसी दूसरे रास्ते की तरफ चले गये किसी शख़्स के बहकाने से बहक कर दूसरी तरफ़ निकल गये या रास्ते के समझने ही में ग़लती कर गये। मन्ज़िल तक हम इन वजहों से नहीं पहुँचे इसमें न तो रास्ता बताने वाले की ग़लती है और न रास्ते की कोई ख़राबी है और न ऐसा है कि रास्ता मन्ज़िल तक न पहुँचता हो। बस इसी तरह इस हमागीर क़ानून पर अपने ख़याल से अमल करने वाला जब मक़सद तक नहीं पहुँचता तो उस शख़्स का मक़सद तक न पहुँचना दूसरे बाहरी मौक़े की बुनियाद पर है क़ानून बेदाग़ है और बताने वाले की कोई ग़लती भी नहीं।

अब सवाल ये पैदा होता है कि आख़िर ऐसे क़ानून की ज़रूरत ही क्या है क्या बग़ैर ऐसे चौमुखी क़ानून के जो हमेशा रहने वाला हो और हर मुल्क के लिए हो ज़िन्दगी कामयाब व कामरान नहीं हो सकती? हालात के बदलने से ख़यालात बदलते हैं, ज़मीनों के बदलाव से एहसासों में फ़र्क़ पैदा होता है आबो हवा के इख़्तेलाफ़, तबीअत पर असर डालते हैं ज़माने के फ़र्क़ ज़हनों में इन्क़ेलाब पैदा कर देते हैं। किसी वक़्त में इन्सान शहंशाहियत को अच्छी नज़र से देखता था, इसके बाद वह वक़्त आया कि जमहूरियत का दौर-दौरा है किसी मुल्क की सोच में ऐसे पुराने ख़याल आज भी हैं जो मुल्क वालों को पुरानी रिवायतों के जाल में जकड़े हुए हैं किसी मुल्क की सोच में इतनी ताज़गी पसन्दी है कि वह हर पुरानी चीज़ को चाहे वह जितनी ही ज़्यादा फ़ायदे की हो अपने से इस तरह अलग कर देने की कोशिश करता है जैसे कोई मुजरिम अपने से जुर्म को अलग करने के लिए नये-नये रास्ते तलाश करता है, तरह-तरह से अलग होने का इज़हार करता है हर पुरानी चीज़ को अपने ज़हन से इस तरह अलग कर देने की कोशिश करता है, जैसे वह टपकता हुआ फोड़ा या रिस्ता हुआ नासूर और इन्सानियत के दामन पर नाक़ाबिले बर्दाश्त बदनुमा दाग़ है। इसलिए ऐसे अलग-अलग मिज़ाज वाले और अलग-अलग तबीअत के इन्सानों के लिए कोई ऐसा क़ानून बना लेना जो हमेशा रहने वाला हो, जिसमें बदलाव मुमकिन न हो, कैसे ठीक हो सकता है? ये तो आज़ाद फ़िक्र को तबीअत के ख़िलाफ क़ैद करना और आज़ाद ज़मीर को अपंग बनाना और ग़ैर मुअतदिल पाबंदियों में जकड़ देना है। इन्सान से उसके फ़ितरी हुक़ूक़ का ज़बरदस्ती छीन लेना है इसलिए क्यों न वह क़ानून बनाया जाए जो ख़यालों के बदलने से बदलता रहे, जिसमें जाएज़ पाबंदियाँ और आज़ादी का क़ानून हो। अगर जमहूरियत पसन्द तबीअतें न हों तो जमहूरी उसूल हों। अगर शहंशाही पसन्द सोच हैं तो शहंशाही क़ानून हो अगर पुराने क़ानून से मुहब्बत है तो पुराने क़ानून हों। अगर नयापन पसन्द हो तो नये क़ानून हों अगर इश्तेराकी निज़ाम मक़सद हो तो इश्तेराकियत का अलम उठा दिया जाए, अगर कम्युनिज़्म की तरफ़ झुकाव है तो मज़हब मिटाया जाए, अगर मज़हब परस्ती का शौक़ हो तो मज़हब को बढ़ावा दिया जाए। बस अगर इस तरह

अमल किया जायेगा तो इन्सान पर बोझ न होगा वरना मुख़ालेफ़त का जुनून हंगामे की वजह साबित होगा और दुनिया मौत व ज़िन्दगी की कशमकश में इस तरह फंस जायेगी जिस तरह कोई ज़िन्दगी का चाहने वाला मौत के मज़बूत पंजों में जकड़ लिया जाए। इस बयान के बाद अगर ग़ौर किया जाए तो नतीजा यही निकलता है कि या तो किसी पर कोई पाबन्दी न हो और या हर शख़्स की चाहत के हिसाब से क़ानून बनाया जाए जैसे हमने एक एक साल के लिए जमहूरी क़ानून बनाया या उस वक़्त तक के लिए ये क़ानून बनाया जब तक कि जमहूरी ख़याल बाक़ी है अगर ग़ौर किया जाये तो जिन कमियों की बुनियाद पर हम ने वह हमागीर क़ानून नहीं माना था वही ख़राबियाँ अब भी बाक़ी रहती हैं इसलिए कि हम ने जमहूरी क़ानून सभी इन्सानों के लिए बनाया, तो पहले तो हमको इसकी जानकारी होना नामुमकिन है कि सारी दुनिया जमहूरी ख़याल की मालिक है अगर मान लो इसकी जानकारी हो भी जाए तो एक ऐसा आला ईजाद करना पड़ेगा जिसमें हर-हर वक़्त हर-हर शख़्स के ख़यालों की परछायी उतरी रहे और वह आला हर शख़्स के पास हो जिसकी जानकारी हर शख़्स को होती रहे जिस किसी ज़हन में जमहूरियत से नफ़रत पैदा हो, उसी लम्हे उसके लिए उसकी चाहत के हिसाब से क़ानून बनाया जाए पहले तो यही सूरत मुमकिन नहीं है, दूसरे हर मुल्क के ख़याल अलग-अलग हैं। इसलिए हर मुल्क के हिसाब से एक अलग क़ानून बनाया जाए (और जहाँ उन दो मुल्कों में इख़्तेलाफ़ का एहसास पैदा हो वहाँ जंग का होना ज़रूरी है) और मुल्क की सरज़मीन और उसके सभी रहने वाले अलग-अलग ख़याल वाले होते हैं इसलिए मुकम्मल आज़ादी देने के हामियों को हर-हर सूबे के लिये एक क़ानून बनाना चाहिए ये भी नाकाफ़ी है क्योंकि शहरों के इख़्तेलाफ़ से भी चाहतों में इख़्तेलाफ़ पैदा होते हैं इसलिए हर शहर के लिए एक क़ानून हो ये भी नाकाफ़ी है ख़ानदानों के इख़्तेलाफ़ से भी ख़यालों के इख़्तेलाफ़ होते हैं एक ख़ानदान की कुछ सोच है दूसरे की कुछ, एक ख़ानदान कुछ चाहता है दूसरा कुछ। इसलिए हर ख़ानदान के लिए एक क़ानून बनाया जाए। और फिर ये भी नाकाफ़ी होगा क्योंकि घर के बदलने से भी चाहतें बदलती हैं हमारे घर में एक चीज़ अच्छी नज़रों से देखी जाती है, दूसरे घरों में बुरी नज़र से देखी जाती है इसलिए हर घर के लिए एक अलग क़ानून होना चाहिए और फिर हर घर में भी एक क़ानून काफ़ी न होगा, क्योंकि हर घर में अलग-अलग लोग अलग-अलग चाहतें रखते हैं, बच्चे कुछ चाहते हैं, जवान कुछ चाहते हैं, बूढ़े कुछ चाहते हैं, मर्द कुछ चाहते हैं, औरतें कुछ चाहती हैं इसलिए हर-हर मर्द के लिए, हर-हर औरत के लिए अलग क़ानून बनाये जाएं और फिर ये भी नाकाफ़ी होगा क्योंकि हर शख़्स की पूरी ज़िन्दगी में एक ही तरह के ख़याल नहीं रहते, बल्कि ख़याल बदलते रहते हैं, बचपने में कुछ, जवानी में कुछ, बुढ़ापे में कुछ, इसलिए नतीजा ये निकला कि सोच की आज़ादी उस वक़्त मिल सकती है जब उसूल व क़ानून को एहसासों के धारे पर छोड़ दिया जाए। जो चाहे करे, कमज़ोर ताक़त से पिस जाए, दौलत वाला ग़रीबों का ख़ून चूस ले, मज़बूत दिमाग़ कमज़ोर दिमाग़ वालों को अपंग बना दे या दूसरे लफ़्ज़ों में इस तरह कहो कि फ़िक्र की हक़ीक़ी आज़ादी और ख़यालों की असली आज़ादी उस वक़्त हासिल हो सकती है जब सबसे अच्छी मख़लूक़ का नुक़त-ए-इम्तियाज़ बिल्कुल हैवानियत में मिला दिया जाए और हर इन्सान को हैवान बना दिया जाए।

अब दुनिया के अक़लमन्द इन्साफ़ करें कि वह इलाही क़ानून बेहतर है जो हर तरह और हर क़िस्म की क़द्रों का बचाव करे या वह क़ानून अमल करने वाला है जो इन्सान के सबसे अच्छा होने को मिटाकर जानवर का साथी बना दे। मालूम हुआ कि बस सही रास्ता और हमागीर क़ानून, इन्सान को इन्सान रखने वाला उसूल, सिर्फ़ दीन का उसूल है मज़हब के क़ानून हैं।